राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ

एकल न्यायमूर्ति आपराधिक पुनरीक्षण याचिका सं. 1513/2022

अलीमुद्दीन पुत्र हजारी खान, उम्र लगभग 43 वर्ष, निवासी गोगोर, जिला सवामाधोपुर

----याचिकाकर्ता

बनाम

राजस्थान सरकार-लोक अभियोजक के माध्यम से प्रतिनिधित्व

----प्रत्यर्थी

एकल न्यायमूर्ति आपराधिक पुनरीक्षण याचिका सं. 1797/2022

इरफान खान पुत्र अल्लानूर, उम्र लगभग 24 वर्ष, निवासी रेलवे कॉलोनी सवाईमाधोपुर राजस्थान से संबद्ध

----याचिकाकर्ता

बनाम

1. राजस्थान सरकार- लोक अभियोजक के माध्यम से प्रतिनिधित्व
2. माखन लाल मीना पुत्र श्री गोपी लाल मीना, उम्र लगभग 47 वर्ष, निवासी 50 विवेकानन्द पुरम रणथम्भौर जिला सवाईमाधोपुर

----प्रत्यर्थीगण

याचिकाकर्ता (गण) की ओर से	:	श्री ए.के. गुप्ता, वरिष्ठ अधिवक्ता के साथ श्री सौरभ प्रताप सिंह चौहान, सुश्री सविता नाथावत, श्री अनूप मीना, श्री गौरव शर्मा, श्री कपिल भारद्वाज एवं श्री दुष्यन्त सिंह नरुका
प्रत्यर्थी (गण) की ओर से	:	श्री सुरेश कुमार, पीपी

माननीय न्यायमूर्ति आशुतोष कुमार

आदेश

आदेश सुरक्षित करने की तिथि	:	02/02/2023
आदेश उच्चारित करने की तिथि	:	31/03/2023

रिपोर्टेबल

1. ये आपराधिक पुनरीक्षण याचिकाएं आपराधिक मामला संख्या 11/2015 में, विद्वान विशेष न्यायाधीश, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, भरतपुर (इसके बाद 'ट्रायल कोर्ट' के रूप में संदर्भित) द्वारा सरकार बनाम कमलेश कुमार जेलिया और अन्य के मामले में दिनांक 21.07.2022 को पारित आदेश के विरूद्ध दायर की गई हैं:, जिसके द्वारा विद्वान ट्रायल कोर्ट ने भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 (संक्षेप में, '1988 का अधिनियम') की धारा 7, 13 (1) (घ), 13 (2) और धारा 120ख आईपीसी के तहत अपराध के लिए आरोपी-अपीलार्थियों के विरूद्ध आरोप तय करने का आदेश दिया है।

2. प्रासंगिक तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं कि याचिकाकर्ता मक्खन लाल मीना ने 26.12.2014 को एक रिपोर्ट प्रस्तुत की, जो इस प्रकार है:

"सेवा में,

श्रीमान पुलिस उप महानिरिक्षक प्रथम,
भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो,
जयपुर(राजस्थान)

विषय:- रिशवत मांगने के संबंध में।

महोदय,

उपरोक्त विषयान्तर्गत निवेदन है कि मैं मक्खन लाल मीना निवासी 50 विवेकानंदपुरम सवाईमाधोपुर का रहने वाला हूँ। नगर परिषद सवाईमाधोपुर द्वारा मैं कॉमर्शियल स्कीम चेतक पार्क के सामने (चौधरी नर्सिंग होम मे पास बजरिया दौसा रोड़ एक व्यावसायिक भुखण्ड साईज 89-6x103-0=1024.27 वर्ग गज की निलामी सुचना दिनांक 2.12.2013 को प्रकाशित की गयी थी, जिस पर मैंने अमानता राशि जमा कराने के उपरान्त निलामी तिथी 18-2-13 को सर्वाधिक बोली 6.51 करोड़ रूपये लगायी थी जो नगर परिषद द्वारा स्वीकार की गई थी। दिनांक 18-12-13 को बैंको की हड़ताल होने पर से मैंने दिनांक 19-12-13को बोली की ¼ राशि 1.63 करोड़ जरिये आर.टी.जी.एस. नगर परिषद में जमा करवा दी थी दसके बाद में भोष ¾ राशि में से 2.97 करोड़ दिनांक 31-1-2014 को जरिये आर.टी.जी.एस. द्वारा जमा करवा दी गई थी। मेरे द्वारा निलामी में लिये गये व्यवसायी भुखण्ड पर डॉ. बीना चौधरी अवैध निर्माण पूर्व से ही कब्जा कर रखा था जिसे तत्काल हटाने पर भोष राशि जमा कराने के लिए मैं दिनांक 19-2-14 व 9-4-14 को नगर परिषद को पत्र लिखे लेकिन नगर परिषद द्वारा भूखण्ड से अतिक्रमण नहीं हटाया गया, इसके बाद नगर परिषद द्वारा दिनांक 3-9-14 के पत्र द्वारा अतिक्रमण हटाये जाने की सुचना मुझे दी गई तथा भेष राशि के निरदेश जमा कराने के लिर दिये वास्तव भुखण्ड से पूरी तरह कब्जा नहीं हटवाया गया था। इसके बाद नगर परिषद सवाईमाधोपुर की ओर से एक अन्तिम नोटिस दिनांक 24-

12-14 दैनिक भस्कर समाचार पत्र में पेज-16 पर प्रकाशित करवाया गया की भोष राशि 1,91,00000/- रूपये मय व्याज राशि 35,73083/- एवं पेनल्टी राशि 13000 कुल रूपये 22686083/- रूपये सात दिन में परिषद में जमा करावे अन्यता पूर्व में जमाशुदा राशि जब्त की जाकर भूखण्ड पुन: निलामी के लिखा गया, इस पर मैंने नगर परिषद में जाकर सम्पर्क किया तो नगर परिषद सभापति कमलेश जेलिया आयूक्त पंकज कुमार अपने दलाल पुलिस सिपाही अमुलूदीन के माध्यम से रिश्वत लेकर काम कराने की जानकारी मिली। अलमुदीन ने मुझसे मेरे काम के लिये कहा कि अगर समय का बढ़वा दुंगा पेलन्टी व ब्याज और कब्जा भी हटवा दूंगा मैं इन रिश्वतखोर जन प्रतिनिधी, आयुक्त को रिश्वत नहीं देना चाहता तथा उनको रिश्वत लेते पकड़वाना चाहता हूँ। मेरी कमलेश जेलिया और पंकज कुमार मंगल से निजी रंजिश या उधार लेनदेन नहीं है। श्रीमान जी कार्रवाई करे, कागजात की कोपी साथ है।
26-12-2014

प्रार्थी,
हस्ताक्षर
मक्खन लाल मीना
50, विवेकानंदपूरम,
रणथम्भोर, सवाईमाधोपुर
(राजस्थान)

3. इस रिपोर्ट पर, अधिनियम 1988 की धारा 7, 13 (1) (घ), 13 (2) और आईपीसी की धारा 120 ख के तहत एफआईआर संख्या 461/2014 दर्ज की गई और जांच के बाद कमलेश कुमार के विरूद्ध आरोप-पत्र दायर किया गया। जेलिया, अलीमुद्दीन और इरफान खान को 1988 के अधिनियम की धारा 7, 13 (1) (घ), 13 (2) और आईपीसी की धारा 120 ख के तहत दंडनीय अपराधों के लिए विद्वान ट्रायल कोर्ट के समक्ष प्रस्तुत किया गया था।

4. विद्वान ट्रायल कोर्ट ने दलीलें सुनने के बाद दिनांक 21.07.2022 को आक्षेपित आदेश पारित किया और आरोपी-अपीलार्थियों के विरूद्ध अधिनियम 1988 धारा 7, 13(1)(घ), 13(2) एवं धारा 120ख आई.पी.सी.की के तहत दंडनीय अपराधों के लिए आरोप तय किए।

5. इस विवादित आदेश से व्यथित होकर, ये आपराधिक पुनरीक्षण याचिकाएँ दायर की गई हैं।

6. याचिकाकर्ता अलीमुद्दीन की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री ए.के. गुप्ता ने तर्क दिया कि याचिकाकर्ता के पास विवादित मामले में कोई अधिकार, हित और प्राधिकार नहीं है। याचिकाकर्ता अलीमुद्दीन पुलिस विभाग में कांस्टेबल है और उसका नगर

परिषद सवाईमाधोपुर से कोई लेना-देना नहीं है। इसलिए इस मामले में उन्हें लोक सेवक नहीं कहा जा सकता।

7. यह भी तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता अलीमुद्दीन का याचिकाकर्ता मक्खन लाल मीना के साथ लंबे समय से व्यापारिक लेनदेन था, जो रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री से स्पष्ट है। यह दिखाने के लिए रिकॉर्ड पर कोई सबूत उपलब्ध नहीं है कि याचिकाकर्ता ने याचिकाकर्ता से किसी पैसे की मांग की थी।

8. याचिकाकर्ता-अलीमुद्दीन के विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि इस मामले में याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत की गई शिकायत स्वयं 1988 के अधिनियम के प्रावधानों से संबंधित संज्ञेय अपराध के कमीशन का खुलासा कर रही थी, लेकिन जांच एजेंसी ने बिना एफआईआर दर्ज किए प्रारंभिक जांच शुरू कर दी। यह तर्क दिया गया है कि जब सूचना संज्ञेय अपराधों के होने का खुलासा करती है तो प्रारंभिक जांच की बिल्कुल भी आवश्यकता नहीं थी।

9. यह भी तर्क दिया गया है कि एफआईआर स्वयं इंगित करती है कि याचिकाकर्ता ने स्वयं अपराध को बढ़ावा दिया और किसी ने कोई मांग नहीं उठाई है। यह भी तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता अलीमुद्दीन को लोक सेवक नहीं कहा जा सकता क्योंकि वह नगर परिषद का कर्मचारी नहीं था। इसलिए, एक लोक सेवक के रूप में उन पर 1988 के अधिनियम के प्रावधानों के तहत मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है।

10. यह भी तर्क दिया गया है कि विद्वान ट्रायल कोर्ट ने अपने आक्षेपित आदेश में **राजस्थान सरकार बनाम अशोक कुमार कश्यप** के मामले में दिए गए माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है, जो **(2021) 11 एससीसी 191 में प्रकाशित** है। यह माना गया है कि आरोप के चरण में केवल आरोपी व्यक्तियों के विरूद्ध प्रथम दृष्टया मामला देखा जाना चाहिए, जबकि **कर्नाटक सरकार बनाम एल मुनीस्वामी और अन्य एआईआर 1977 एससी 1489** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ में माना गया है कि आरोप तय करते समय न्यायालय को यह निर्धारित करना होगा कि किसी आरोपी के विरूद्ध आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं। न्यायालय को यह प्रश्न निर्धारित करना है कि क्या रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री, यदि उसका खंडन नहीं किया गया है, ऐसी है जिसके आधार पर उचित रूप से यह कहा जा सकता है कि दोषसिद्धि संभव है। विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि आरोप तय करते

समय केवल प्रथम दृष्टया ही नहीं देखा जाना चाहिए, बल्कि आरोपी व्यक्तियों के विरूद्ध आरोप तय करने के लिए प्रथम दृष्टया मामले से कुछ अधिक की आवश्यकता होती है। इसलिए, विद्वान ट्रायल कोर्ट को **कर्नाटक सरकार बनाम एल मुनीस्वामी और अन्य (सुप्रा.)** के निर्णय पर भरोसा करना चाहिए था जो बड़ी पीठ का निर्णय है और उसे **राजस्थान सरकार बनाम अशोक कुमार कश्यप (सुप्रा.)** के निर्णय पर भरोसा नहीं करना चाहिए था।

11. यह भी तर्क दिया गया है कि यह सुस्थापित कानून है कि अवैध परितुष्टि के रूप में राशि की मांग और स्वीकृति 1988 के अधिनियम के तहत अपराध बनने के लिए अनिवार्य है। वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता द्वारा कोई मांग नहीं की गई है- इसलिए, इस मामले में याचिकाकर्ता अलीमुद्दीन को 1988 के अधिनियम के तहत उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। यह भी तर्क दिया गया है कि 1988 के अधिनियम की धारा 13(1)(घ)(iii) के प्रावधानों का भी हवाला दिया गया **है।** माननीय उच्चतम न्यायालय की एक बड़ी पीठ ने **डॉ. मनमोहन सिंह बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो के मामले में अपील की विशेष अनुमति के लिए याचिका (सीआरएल) सीआरएलएमपी संख्या 5056-5057/2015 में दिनांक 01.04.2015 को निर्णय लिया।** इसलिए, उस बड़ी बेंच के निर्णय तक, विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित धारा 13(1)(घ) के तहत आरोप तय करने के आदेश पर रोक लगाई जाने योग्य है।

12. यह भी तर्क दिया गया कि याचिकाकर्ता के विरूद्ध आईपीसी की धारा 120ख के तहत आरोप तय करने के लिए कोई सामग्री नहीं है। यह भी तर्क दिया गया है कि न्यायालय को इस पर विचार करना होगा कि यदि अंतिम दोषसिद्धि की संभावना कम है, तो आपराधिक मुकदमा जारी रखने की अनुमति देने से कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा नहीं होगा। इस मामले के कानूनी पहलुओं को विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा नजरअंदाज कर दिया गया है। इन परिस्थितियों में, विद्वान ट्रायल कोर्ट का आक्षेपित आदेश अवैध और विकृत है, जिसे रद्द कर दिया जाना चाहिए।

13. यह भी तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता अलीमुद्दीन द्वारा परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138 के तहत याचिकाकर्ता मक्खन लाल मीना के विरूद्ध अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, गंगापुर सिटी की न्यायालय में एक शिकायत प्रस्तुत की गई थी, जिसे केस नंबर 26/2019 (156/2016)(790/2016) द्वारा पंजीकृत किया गया था। याचिकाकर्ता-मक्खन लाल मीना को विद्वान ट्रायल कोर्ट ने दिनांक 06.03.2019 के निर्णय के तहत दोषी ठहराया था और दो साल की कैद की सजा सुनाई थी और मुआवजे के रूप में 94 लाख रुपये जमा करने का भी निर्देश दिया था। उस निर्णय के विरूद्ध,

याचिकाकर्ता-मक्खन लाल मीना ने अपील संख्या 81/2022 दायर की। उस अपील में दिनांक 02.08.2022 को याचिकाकर्ता-अलीमुद्दीन एवं परिवादी मक्खन लाल मीना के बीच समझौता हुआ तथा दिनांक 13.08.2022 को राष्ट्रीय लोक न्यायालय में उक्त समझौते के अनुसार अपील का निस्तारण किया गया। इससे पता चलता है कि याचिकाकर्ता मक्खन लाल मीना और याचिकाकर्ता-अलीमुद्दीन के बीच व्यावसायिक संबंध थे। उपरोक्त स्थिति में, यह अच्छी तरह से कहा जा सकता है कि वर्तमान याचिकाकर्ता अलीमुद्दीन को इस मामले में झूठा फंसाया गया है। इसलिए, पुनरीक्षण याचिका की अनुमति दी जाए और विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित आदेश दिनांक 21.07.2022 को रद्द कर दिया जाए और अपास्त किया जाए।

14. याचिकाकर्ता-इरफ़ान खान की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री दुष्यन्त सिंह नरूका ने प्रस्तुत किया कि मामले में याचिकाकर्ता-इरफ़ान खान की कोई विशिष्ट भूमिका नहीं है, क्योंकि न तो वह जमीन का मालिक है और न ही उसका किसी के साथ कोई विवाद है।

15. विद्वान अधिवक्ता ने यह भी प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता-इरफान खान से उनके उदाहरण पर कोई वसूली नहीं की गई है और यह दिखाने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि याचिकाकर्ता ने किसी आधिकारिक कार्य के संबंध में याचिकाकर्ता से पैसे की मांग की थी।

16. यह भी तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता-इरफान खान के विरूद्ध कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनाया गया है और उनके विरूद्ध 1988 के अधिनियम के तहत शुरू की गई कार्यवाही पूरी तरह से अवैध है और इसे अपास्त किया किया जाना चाहिए।

17. विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि याचिकाकर्ता-इरफान खान अन्य आरोपी व्यक्तियों को नहीं जानता था और कथित अपराध से उसका कोई संबंध नहीं है।

18. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि याचिकाकर्ता एक लोक सेवक नहीं है और एक लोक सेवक के रूप में अपने कर्तव्यों का निर्वहन नहीं कर रहा है। मामला नगर परिषद, सवाई माधोपुर से संबंधित है और वह अपने मामले से संबंधित तथ्यों के संबंध में पूरी तरह से एक नागरिक है और इस प्रकार, 1988 के अधिनियम के प्रावधान उस पर लागू नहीं होते हैं।

19. यह भी तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता-इरफान खान को राजनीतिक प्रतिशोध के कारण इस मामले में झूठा फंसाया गया है।

20. यह प्रार्थना की गई है कि पुनरीक्षण याचिकाओं की अनुमति दी जाए और अपीलार्थियों को सभी अपराधों से मुक्त कर दिया जाए।

21. दोनों अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है:

1. केंद्रीय जांच ब्यूरो (सीबीआई) बनाम थॉममांड्रू हन्ना विजयलक्ष्मी, एआईआर 2021 एससी 5041 में प्रकाशित।

2. रमेश बालकृष्ण कुलकर्णी बनाम महाराष्ट्र सरकार, एआईआर 1985 एससी 1655 में प्रकाशित।

3. रुक्मिणी नार्वेकर बनाम विजया सातार्डेकर और अन्य, एआईआर 2009 एससी 1013 में प्रकाशित।

4. कर्नाटक सरकार बनाम एल मुनीस्वामी और अन्य, एआईआर 1977 एससी 1489 में प्रकाशित।

5. सेंचुरी स्पिनिंग एंड मैन्युफैक्चरिंग कंपनी लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र सरकार, एआईआर 1972 एससी 545 में प्रकाशित।

6. राजस्थान सरकार बनाम अशोक कुमार कश्यप, (2021) 11 एससीसी 191 में प्रकाशित।

7. मट्टूलाल बनाम राधे लाल, एआईआर 1974 एससी 1596 में प्रकाशित।

8. के.एस. पांडुरंगा बनाम कर्नाटक सरकार, एआईआर 2013 एससी 2164 में प्रकाशित।

9. बी. जयराज बनाम आंध्र प्रदेश सरकार, (2014) 13 एससीसी 15 में प्रकाशित।

10. अशोक कुमार यादव बनाम राजस्थान सरकार, एकलपीठ में रिपोर्ट किया गया। आपराधिक अपील संख्या 179/2018, दिनांक 18.05.2022 को निर्णय लिया गया।

11. पंजाब सरकार बनाम मदन मोहन लाल वर्मा, एआईआर 2013 एससी 3368 में प्रकाशित।

12. सी. सुकुमारन बनाम केरल सरकार, (2015) 11 एससीसी 314 में प्रकाशित।

13. भारत संघ बनाम प्रफुल्ल कुमार सामल और अन्य, एआईआर 1979 एससी 366 में प्रकाशित।

14. दिलावर बाबू किरणे बनाम महाराष्ट्र सरकार, एआईआर 2002 एससी 564 में प्रकाशित।

15. योगेश @ सचिन जगदीश बनाम महाराष्ट्र सरकार, एआईआर 2008 एससी 2991 में प्रकाशित।

16. सरबजीत सिंह और अन्य बनाम पंजाब सरकार, एआईआर 2009

एससी 2792 में प्रकाशित।

17. आधिकारिक परिसमापक बनाम दयानंद और अन्य, (2008) 10 एससीसी 1 में प्रकाशित।

18. डॉ. मनमोहन सिंह बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो, अपील की विशेष अनुमति के लिए याचिका (सीआरएल)... सीआरएलएमपी संख्याएं। 5056-5057/2015

01.04.2015 को निर्णय लिया गया।

19. माधवराव जीवाजी राव सिंधिया बनाम संभाजीराव चंद्रोजी राव आंग्रे, AIR 1988 SC 709 में प्रकाशित।

22. दूसरी ओर, विद्वान लोक अभियोजक ने आपराधिक पुनरीक्षण याचिकाओं का विरोध किया और तर्क दिया कि आरोप-पत्र में अपीलार्थियों के विरूद्ध पर्याप्त सबूत हैं। विद्वान ट्रायल कोर्ट ने मामले के हर पहलू की जांच करने के बाद अपीलार्थियों के विरूद्ध आरोप तय करने का आदेश दिया है। इसलिए, इन पुनरीक्षण याचिकाओं में कोई योग्यता नहीं है और ये खारिज किए जाने योग्य हैं।

23. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

24. रिकॉर्ड के अवलोकन से पता चलता है कि डिजिटल वॉयस रिकॉर्डर में दर्ज रिश्वत की मांग की प्रतिलेखन का एक ज्ञापन रिकॉर्ड पर उपलब्ध है। अभियोजन पक्ष के मामले के समर्थन में सीआरपीसी की धारा 161 के तहत दर्ज गवाहों के बयान भी हैं। जांच करने पर पता चला कि रुपये. याचिकाकर्ता से 20 लाख रुपये की मांग की गई थी। 27/12/14 को 15 लाख प्राप्त हुए। यह पैसा कमलेश जेलिया के आधिकारिक आवास पर खड़ी दो कारों में छुपाया गया था और जांच के दौरान बरामद कर लिया गया। याचिकाकर्ता अलीमुद्दीन और इरफान सहित आरोपी व्यक्तियों का सोडियम कार्बोनेट परीक्षण किया गया, जो सकारात्मक आया। इसलिए, ट्रायल कोर्ट ने प्रथम दृष्टया मामला खोजने के लिए उपरोक्त सभी सबूतों के साथ-साथ रिकॉर्ड पर उपलब्ध अन्य सबूतों पर भरोसा किया और आक्षेपित आदेश पारित करके आरोप तय करने के लिए आगे बढ़े।

25. **एशियन रिसर्फेसिंग ऑफ रोड एजेंसी प्राइवेट लिमिटेड और अन्य बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो एआईआर 2018 एससी 2039,** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने निम्नानुसार अवलोकन किया:

"31. जैसा कि ऊपर दिए गए पैरा 9 में पहले के निर्णयों में उल्लेख किया गया है, हमने पहले ही न्यायिक अनुभव उद्धृत किया है कि उच्च

न्यायालयों के समक्ष आरोप के आदेश को चुनौती देने के कारण भ्रष्टाचार के मामलों की सुनवाई आगे बढ़ने की अनुमति नहीं है। एक बार स्थगन मिलने के बाद, उच्च न्यायालय के समक्ष याचिका के निपटान में लंबा समय लगता है। आरोप तय करने के आदेश के विरूद्ध चुनौती पर विचार करने के लिए भारी मात्रा में सामग्री की सावधानीपूर्वक जांच की आवश्यकता नहीं हो सकती है जो कि लघु परीक्षण की प्रकृति में हो सकती है। फिर भी, कानून के स्पष्ट होने के बावजूद कभी-कभी न्यायालय को ऐसा करने के लिए कहा जाता है कि आरोप के चरण में न्यायालय को केवल यह देखना होता है कि रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री आरोपी को अपराध से उचित रूप से जोड़ती है या नहीं। हरदीप सिंह बनाम पंजाब सरकार 25. (2014) 3 एससीसी 92: (एआईआर 2014 एससी 1400, पैरा 93) में इस न्यायालय की संविधान पीठ ने कहा:

100. हालाँकि, ऐसे मामलों की एक श्रृंखला है जिनमें इस न्यायालय ने सीआरपीसी की धारा 227, 228, 239, 240, 241, 242 और 245 के प्रावधानों से निपटते हुए लगातार यह माना है कि आरोप तय करने के चरण में न्यायालय ने इस प्रश्न पर अपना दिमाग लगाया कि क्या अभियुक्त द्वारा अपराध करने का अनुमान लगाने का कोई आधार है *या नहीं। न्यायालय को यह देखना होगा कि रिकॉर्ड पर लाई गई सामग्री आरोपी को अपराध से उचित रूप से जोड़ती है या नहीं। इससे अधिक कुछ भी पूछताछ करने की आवश्यकता नहीं है। उपरोक्त प्रावधानों से निपटते समय, प्रथम दृष्टया मामले का परीक्षण लागू किया जाना है। न्यायालय को यह पता लगाना होगा कि अभियोजन पक्ष द्वारा साक्ष्य के रूप में पेश की जाने वाली सामग्री न्यायालय के लिए आरोपी के विरूद्ध आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त है या नहीं। (कर्नाटक सरकार बनाम एल. मुनिस्वामी [(1977) 2 एससीसी 699]: (एआईआर 1977 एससी 1489) ऑल इंडिया बैंक ऑफिसर्स कन्फेडरेशन बनाम यूनियन ऑफ इंडिया [(1989) 4 एससीसी 90]: (एआईआर 1989 एससी 2045)) स्त्री अत्याचार विरोधी परिषद बनाम दिलीप नाथूमल चोरडिया [(1989) 1 एससीसी 715] सरकार म.प्र. बनाम कृष्ण चंद्र सक्सेना [(1996) 11 एससीसी 439] और सरकार म.प्र. बनाम मोहनलाल सोनी [(2000) 6 एससीसी 338] : (एआईआर 2000 एससी 2583)।*

101. दिलावर बालू कुराने बनाम महाराष्ट्र सरकार [(2002) 2 एससीसी 135] (एआईआर 2000 एससी 2583) में इस न्यायालय ने सीआरपीसी की धारा 227 और 228 के प्रावधानों से निपटते समय, इसके पहले के निर्णय भारत संघ बनाम प्रफुल्ल कुमार सामल में न्यायालय [(1979) 3 एससीसी 4]: (एआईआर 1979 एससी 366) पर बहुत अधिक निर्भरता रखी और माना कि आरोप तय करने के सवाल पर विचार करते समय, न्यायालय पता लगाने के सीमित उद्देश्य के लिए सबूतों का वजन कर सकती है। क्या आरोपी के विरूद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनाया गया है या नहीं और क्या न्यायालय के समक्ष रखी गई सामग्री आरोपी के विरूद्ध गंभीर संदेह का खुलासा करती है जिसे ठीक से समझाया नहीं गया है। ऐसी स्थिति में, न्यायालय का आरोप तय करना और मुकदमे को आगे बढ़ाना उचित है। न्यायालय को मामले की व्यापक संभावनाओं, सबूतों के कुल प्रभाव और न्यायालय के सामने पेश किए गए दस्तावेजों

पर विचार करना होगा, लेकिन न्यायालय को मामले के पक्ष और विपक्ष में घूम-घूमकर जांच नहीं करनी चाहिए और सबूतों को ऐसे तौलना नहीं चाहिए जैसे कि वह आचरण कर रही हो।

102. सुरेश बनाम महाराष्ट्र सरकार [(2001) 3 एससीसी 703]: (एआईआर 2001 एससी 1375) में इस न्यायालय ने निरंजन सिंह करम सिंह पंजाबी बनाम जीतेंद्र भीमराज बिज्जया [(1990) 764 (एआईआर 1990 एससी 1962) एससीसी और महाराष्ट्र सरकार बनाम प्रिया शरण महाराज [(1997) 4 एससीसी 393]: (एआईआर 1997 एससी 2041) में पहले के निर्णयों पर ध्यान देने के बाद] अभिनिर्धारित किया: (सुरेश केस, एससीसी पृष्ठ 707, पैरा 9)।

"9.... धारा 227 और 228 के स्तर पर न्यायालय को रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री और दस्तावेजों का मूल्यांकन करने की आवश्यकता है ताकि यह पता लगाया जा सके कि कथित अपराध उनके अंकित मूल्य पर सामने आने वाले तथ्य सभी सामग्रियों के अस्तित्व का खुलासा करते हैं या नहीं। न्यायालय, इस सीमित उद्देश्य के लिए, सबूतों को छांट सकती है क्योंकि उस प्रारंभिक चरण में भी यह उम्मीद नहीं की जा सकती है कि अभियोजन पक्ष द्वारा बताई गई सभी बातों को सुसमाचार सत्य के रूप में स्वीकार कर लिया जाए, भले ही वह सामान्य ज्ञान या व्यापक संभावनाओं के विपरीत हो। इसलिए, आरोप तय करने के चरण में न्यायालय को यह पता लगाने के लिए सामग्री पर विचार करना होगा कि क्या कोई आधार है।

***यह मानने के लिए कि आरोपी ने अपराध किया है** या कि उसके विरूद्ध आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है और** इस निष्कर्ष पर पहुंचने के उद्देश्य से नहीं कि इससे दोषसिद्धि होने की संभावना नहीं है* *(प्रिया शरण केस, एससीसी पृष्ठ 397, पैरा 8)" : (मूल में बल)।*

103. इसी तरह बिहार राज्य बनाम रमेश सिंह [(1977) 4 एससीसी 39] : (एआईआर 1977 एससी 2018) मामले में इस मुद्दे से निपटते हुए, इस न्यायालय ने कहा: (एससीसी पी 42, पैरा 4)।

"4. ....यदि अभियोजक अभियुक्त के अपराध को साबित करने के लिए जो साक्ष्य प्रस्तुत करना चाहता है, भले ही उसे जिरह में चुनौती देने से पहले पूरी तरह से स्वीकार कर लिया गया हो या बचाव साक्ष्य द्वारा खंडित किया गया हो, यदि कोई हो, तो यह नहीं दिखाया जा सकता है कि अभियुक्त ने अपराध किया है, तो मुक़दमे को आगे बढ़ाने के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं होगा।"

32. यदि उपरोक्त कानून के विपरीत, आरोप के चरण में, उच्च न्यायालय संभावनाओं को तौलने और सामग्री की पुनः सराहना करने का दृष्टिकोण अपनाता है, तो यह निश्चित रूप से एक समय लेने वाली प्रक्रिया हो सकती है। इस प्रकार, मुकदमे के शीघ्र अंतिम निपटान की विधायी नीति बाधित होती है। इस प्रकार, इस दृष्टिकोण को दोहराते हुए भी कि क्षेत्राधिकार की कमी की एक पेटेंट त्रुटि को ठीक करने के लिए असाधारण स्थिति में आरोप तय करने के आदेश के विरूद्ध चुनौती पर विचार करने के लिए उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार पर कोई रोक नहीं है, ऐसे क्षेत्राधिकार का प्रयोग दुर्लभ से दुर्लभतम मामले में सीमित होना

चाहिए।

26. इसके अलावा, **भावना बाई बनाम घनश्याम और अन्य AIR 2020 SC 554** में प्रकाशित मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने निम्नानुसार पाया:

> *"16. ...सीआरपीसी की धारा 228 के तहत आरोप तय करने के लिए न्यायाधीश को विस्तृत कारण दर्ज करने की आवश्यकता नहीं है। जैसा कि पहले बताया गया है, आरोप तय करने के चरण में, न्यायालय को विस्तृत जांच करने की आवश्यकता नहीं है; केवल प्रथम दृष्टया मामला देखा जा रहा है। जैसा कि नति भद्र शाह और अन्य बनाम पश्चिम बंगाल सरकार (2000) 1 एससीसी 722: (एआईआर 2000 एससी 522) में कहा गया है, सीआरपीसी की धारा 228 के तहत शक्ति का प्रयोग करते समय, न्यायाधीश को आरोपी के विरूद्ध'आरोप तय करने के लिए अपने कारणों को रिकॉर्ड करने की आवश्यकता नहीं है।"*

27. **राधे श्याम और अन्य बनाम कुंज बिहारी और अन्य एआईआर 1990** में प्रकाशित गई **एससी 121** के मामले में धारा 482 सीआरपीसी के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए मामले में आरोप तय करने के आदेश को रद्द करने के संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने निम्नानुसार कहा:

> *"8. ...जहाँ तक उच्च न्यायालय का विचार है कि "न्याय के हित में, धारा 482, सीआर.पी.सी. के तहत यह न्यायालय का कर्तव्य है कि वह पुलिस सबूतों के गुण-दोष पर गौर करे और दायर किए गए दस्तावेजों और बयानों की सही ढंग से सराहना करे। हम केवल मोहम्मद अकबर दार बनाम जम्मू और कश्मीर सरकार। 1981 सप्लीमेंट एससीसी 80: (एआईआर 1981 एससी 1548) का उल्लेख कर सकते हैं जहां यह बताया गया है कि आरोप तय करने के चरण में, न्यायालय द्वारा सबूतों और सामग्रियों पर सावधानीपूर्वक विचार करने की आवश्यकता नहीं है।"*

28. इसके अलावा, **एशियन रिसर्फेसिंग ऑफ रोड एजेंसी प्राइवेट लिमिटेड (सुप्रा.)** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने आरोप तय करने के आदेश को रद्द करने की उच्च न्यायालय की शक्ति के संबंध में, निम्नानुसार कहा:

> *"35. इस प्रकार, हम कानून की घोषणा करते हैं कि आदेश निर्धारण आरोप पूरी तरह से एक अंतरिम आदेश नहीं है और न ही अंतिम आदेश है। याचिका के लेबल के बावजूद, उच्च न्यायालय का क्षेत्राधिकार वर्जित नहीं है, चाहे वह सीआरपीसी की धारा 397 या 482 या संविधान का अनुच्छेद 227 के तहत हो। हालाँकि, उक्त क्षेत्राधिकार का प्रयोग विधायी नीति के अनुरूप किया जाना चाहिए ताकि किसी भी तरह से बाधा उत्पन्न किए बिना किसी मुकदमे का शीघ्र निपटान सुनिश्चित किया जा सके। इस प्रकार माना जाता है, आरोप के आदेश की चुनौती को दुर्लभ से दुर्लभतम मामले में केवल क्षेत्राधिकार की पेटेंट त्रुटि को ठीक करने के लिए माना जाना चाहिए, न कि मामले को फिर से सराहने के लिए।"*

29. जहां तक आरोप तय करने के समय अपीलार्थियों के बचाव सिद्धांत को देखने के संबंध में विद्वान अधिवक्ता के तर्क का सवाल है, **रुक्मिणी नार्वेकर बनाम विजया सातार्डेकर और अन्य एआईआर 2009 एससी 1013** में प्रकाशित मामले पर भरोसा करते हुए यह तर्क दिया गया है कि हालांकि धारा 228 सीआरपीसी के चरण में प्रस्तावित बचाव को ट्रायल कोर्ट द्वारा नहीं देखा जा सकता है, लेकिन धारा 482 सीआरपीसी के तहत इसे बहुत अच्छी तरह से देखा जा सकता है। लेकिन, **अमित कपूर बनाम रमेश चंदर और अन्य** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने **MANU/SC/0706/2012 पैरा 19 (12) और (13)** में कहा:

> *"...(12) धारा 228 और/या धारा 482 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए, न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए किसी आरोपी द्वारा दी गई बाहरी सामग्रियों पर विचार नहीं कर सकता है कि किसी अपराध का खुलासा नहीं किया गया था या उसके बरी होने की संभावना थी। न्यायालय को अभियोजन पक्ष द्वारा संलग्न रिकॉर्ड और दस्तावेजों पर विचार करना होगा।*
>
> *(13) किसी आरोप को रद्द करना निरंतर अभियोजन के नियम का एक अपवाद है। जहां अपराध मोटे तौर पर संतुष्ट है, न्यायालय को उस प्रारंभिक चरण में इसे रद्द करने के बजाय अभियोजन जारी रखने की अनुमति देने के लिए अधिक इच्छुक होना चाहिए। न्यायालय से दस्तावेजों या अभिलेखों की स्वीकार्यता और विश्वसनीयता तय करने की दृष्टि से अभिलेखों को मार्शल करने की अपेक्षा नहीं की जाती है, लेकिन प्रथम दृष्टया एक राय बनती है..."*

30. इस प्रकार, माननीय उच्चतम न्यायालय की विभिन्न घोषणाओं के आधार पर उपर्युक्त चर्चा से निम्नलिखित सिद्धांत तय किए जा सकते हैं:

> i. आरोप तय करने के चरण में, न्यायालय को केवल यह देखना है कि क्या रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री आरोपी को अपराध से जोड़ती है। इससे अधिक कुछ भी पूछताछ करने की आवश्यकता नहीं है। **[एशियन रिसर्फेसिंग ऑफ रोड एजेंसी (सुप्रा.)]**
>
> ii. आरोप तय करने के आदेश के विरूद्ध चुनौती पर विचार करने के लिए भारी मात्रा में सामग्री की सावधानीपूर्वक जांच की आवश्यकता नहीं हो सकती है जो कि लघु परीक्षण की प्रकृति में हो सकती है। **[एशियन रिसर्फेसिंग ऑफ रोड एजेंसी (सुप्रा.)]**
>
> iii. आरोप तय करने के चरण में, न्यायालय को विस्तृत जांच करने की आवश्यकता नहीं है; केवल प्रथम दृष्टया मामला देखा जा रहा है। **[भावना बाई (सुप्रा.)]**
>
> iv. आरोप के आदेश को चुनौती केवल दुर्लभ से दुर्लभ मामले में ही स्वीकार की जानी चाहिए ताकि क्षेत्राधिकार की एक पेटेंट त्रुटि को ठीक किया जा सके न कि मामले को फिर से महत्व देने के लिए।" **[(एशियन रिसर्फेसिंग ऑफ रोड एजेंसी (सुप्रा.)]**

31. याचिकाकर्ता की ओर से यह भी एक महत्वपूर्ण तर्क रहा है कि, **एआईआर 2021 एससी 5041** में प्रकाशित **केंद्रीय जांच ब्यूरो (सीबीआई) बनाम थॉममांडू हन्ना विजयलक्ष्मी** मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय के अनुसार, ऐसे मामलों में जहां एफआईआर से ही संज्ञेय अपराध का खुलासा हो जाता है, तो उस स्थिति में प्रारंभिक जांच करना अनिवार्य नहीं है। माननीय उच्चतम न्यायालय का उपरोक्त उद्धृत निर्णय केवल यह निर्धारित करता है कि एफआईआर दर्ज करने से पहले प्रारंभिक जांच करना अनिवार्य नहीं है। इसमें कहीं भी यह नहीं कहा गया है कि यदि कोई जांच की गई है, तो इससे जांच ख़राब हो जाएगी। बल्कि **ललिता कुमारी बनाम के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय। उत्तर प्रदेश सरकार एवं अन्य एआईआर 2014 एससी 187** में प्रकाशित में स्पष्ट रूप से माना गया है कि भ्रष्टाचार के मामलों सहित कुछ मामलों में, एफआईआर दर्ज करने से पहले जांच एजेंसी द्वारा प्रारंभिक जांच की जा सकती है। प्रासंगिक अनुच्छेद इस प्रकार उद्धृत किया गया है:

> *111. उपरोक्त चर्चा के मद्देनजर, हम मानते हैं:*
> *(i) धारा के तहत एफआईआर दर्ज करना अनिवार्य है संहिता की धारा 154, यदि सूचना किसी संज्ञेय अपराध के घटित होने का खुलासा करती है और ऐसी स्थिति में कोई प्रारंभिक जांच की अनुमति नहीं है। (ii) यदि प्राप्त जानकारी संज्ञेय अपराध का खुलासा नहीं करती है, लेकिन जांच की आवश्यकता को इंगित करती है, तो प्रारंभिक जांच केवल यह सुनिश्चित करने के लिए की जा सकती है कि संज्ञेय अपराध का खुलासा हुआ है या नहीं। (iii) यदि जांच में संज्ञेय अपराध होने का खुलासा होता है, तो एफआईआर दर्ज की जानी चाहिए। ऐसे मामलों में जहां प्रारंभिक जांच शिकायत को बंद करने में समाप्त होती है, ऐसे समापन की प्रविष्टि की एक प्रति पहले सूचनादाता को तुरंत और एक सप्ताह के भीतर प्रदान की जानी चाहिए। इसमें शिकायत को बंद करने और आगे न बढ़ने के कारणों का संक्षेप में खुलासा करना होगा। (iv) संज्ञेय अपराध का खुलासा होने पर पुलिस अधिकारी अपराध दर्ज करने के अपने कर्तव्य से नहीं बच सकता। उन दोषी अधिकारियों के विरूद्ध कार्रवाई की जानी चाहिए जो एफआईआर दर्ज नहीं करते हैं यदि उनके द्वारा प्राप्त जानकारी से संज्ञेय अपराध का पता चलता है। (v) प्रारंभिक जांच का दायरा प्राप्त जानकारी की सत्यता या अन्यथा को सत्यापित करना नहीं है, बल्कि केवल यह सुनिश्चित करना है कि क्या जानकारी किसी संज्ञेय अपराध का खुलासा करती है। (vi) किस प्रकार की और किन मामलों में प्रारंभिक जांच की जानी है, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। मामलों की श्रेणी जिनमें प्रारंभिक जांच की जा सकती है वे इस प्रकार हैं: (क) वैवाहिक विवाद/पारिवारिक विवाद (ख) वाणिज्यिक अपराध (ग) चिकित्सा लापरवाही के मामले (घ) भ्रष्टाचार के मामले (ङ) ऐसे मामले जहां आपराधिक मुकदमा शुरू करने में असामान्य देरी/देरी होती है, उदाहरण के लिए, देरी के कारणों को संतोषजनक ढंग से बताए बिना*

मामले की रिपोर्ट करने में 3 महीने से अधिक की देरी

32. इसलिए, उपरोक्त चर्चाओं के आलोक में, इस न्यायालय ने पाया कि दोनों आपराधिक पुनरीक्षण याचिका में गुणागुण नहीं है और इसलिए खारिज किए जाने योग्य हैं।

33. परिणामस्वरूप, दोनों याचिकाएँ खारिज कर दी गईं। स्टे अर्जियां भी खारिज कर दी गईं।

(आशुतोष कुमार), न्यायमूर्ति

MADAN/Reserved

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी. के. अग्रवाल**,** द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।